International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 18-01-2025, Accepted: 19-02-2025, Published: 06-03-2025
Volume 11, Issue 1, 2025, Page No. 75-79

'रामचरितमानस' एवं'साकेत' के 'राम': वर्तमान संदर्भों में

डॉ. दीपा त्यागी
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, इस्माईल नेशनल महिला पी.जी. कॉलिज, मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
भारत की पावन धरा पर 'श्रीराम' एक ऐसा विलक्षण व्यक्तित्व है, जो स्मरण मात्र से ही हृदय को आध्यात्मिकता से आप्लावित कर देता है। धर्मोद्धारक मर्यादाशील, सौन्दर्य निधान 'राम' काव्य नायक के रूप में अवतरित होकर युगीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक परिस्थितियों एवं उनसे उत्पन्न प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत करते हुए मानवतावाद की प्रतिष्ठा करने वाले हैं। 'रामायण' महाकाव्य से लेकर आज तक जितने रामकाव्य लिखे गये, उनमें सर्वाधिक प्रभावशाली एवं उत्कृष्ट रूप में 'राम' का चरित्रांकन करने का श्रेय जाता है लोकनायक तुलसीदास को। महाकवि ने 'राम' में नर एवं नारायणत्व की प्रतिष्ठा करके समाज हित में विविध जीवन मूल्यों की स्थापना करने के लिए 'रामचरितमानस' का सृजन किया। 'मानस' के 'राम' तो दीनोद्धारक पाप विनाशक हैं ही, आधुनिक काल के कवि मैथिलीशरण गुप्त के राम भी ''संदेश नहीं मैं स्वर्ग का लाया, धरा को स्वर्ग बनाये आया' का भाव लिए 'साकेत' महाकाव्य रूपी धरा पर अवतरित हुए हैं।
तुलसी का युग हो या मैथिलीशरण गुप्त का दोनों के ही समय दासता की श्रृंखला थी। एक युग में यवनों के कारण धार्मिक कट्टरता हिंसा, विलासिता, दुराचार था तो दूसरे में अंग्रेजी शासन की पशुता थी, जिसके फलस्वरूप समाज व्यवस्था विश्रृंखलित हो गयी थी। ऐसे ही भयावह परिवेश में जीवनदायिनी शक्ति के रूप में 'राम' का अवतरण महाकाव्यों के माध्यम से हुआ। रघुकुल भूषण एवं रघुकुल मणि 'राम' आदर्श एवं आज्ञाकारी पुत्र, कुशल शासक, गुरू के प्रति नतमस्तक उदात भाव संपन्न शिष्य, आदर्श भाई एवं सखा तो थे ही, धरा पर मानवता का परचम लहराने वाले एक परिपूर्ण मानव के रूप में प्रतिष्ठित थे। 'धर्म बड़ा, धन धाम नहीं' कहने वाले 'राम' शरणागतों की पीड़ा देखकर आहत हुए 'निसिचर हीन करउँ महिं का प्रण धारण करने में कोई संकोच नहीं किया। राम में कर्त्तव्यपरायणता, शीलता, समर्पण एवं त्याग भावना का प्रमुख कारण उनकी सकारात्मक सोच है जो उन्हें कभी विचलित नहीं होने देती। विमाता द्वारा निष्कासन, भाई का राजतिलक, विश्वामित्र के साथ जाकर राक्षसों का संहार, श्री परशुराम के क्रोध के समक्ष विनम्र होना आदि विविध प्रसंगों में 'राम' सकारात्मक रहे हैं।
वर्तमान समय में हम स्वतंत्र वातावरण में जीवनयापन कर रहे हैं, किसी भी विदेशी की दासता में नहीं हैं फिर भी जीवन में छटपटाहट, एकाकीपन आपसी वैमनस्य, द्वेष, कट्टरता ने जड़ें जमा ली हैं। भौतिक संसाधनों की अंधी दौड़ ने भारतीय संस्कृति की समावेशी प्रवृत्ति को छिन्न–भिन्न कर दिया है, राजनैतिक एवं आर्थिक विषमताओं ने पारिवारिक संबंधों को भी विघटित कर दिया है। ''प्रातः काल उठि के रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।'' ऐसे 'राम' जिस धरा पर हुए हैं उसी धरा पर आज वृद्ध माता–पिता या तो वृद्धाश्रम में रह रहे हैं या भिक्षावृत्ति करके जीवन व्यतीत कर रहे हैं। सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों की तिलांजलि देने वाले राजनेता व प्रलोभन की राजनीति करते हुए राष्ट्र विरोधी गतिविधियों में संलिप्त देशद्रोहियों के पक्षधर बनकर राष्ट्र को अवनति की ओर ले जा रहे हैं। निर्दोषों पर प्रहार करने वाले क्रूर आतंकवादी एवं उनके सहयोगी पत्थरबाजों के लिए राम जैसे व्यक्तित्व की आवश्यकता है। राम' के ये शब्द 'भय बिन होय न प्रीति'' हिंसा करने वालों के साथ उनकी भाषा में बात करने के लिए प्रेरित करते हैं। जातिगत विद्वेषता समाप्त करने वाले, शरणागतों के रक्षक राम ने रावण का वध किया–यह युद्ध सत्ता का नहीं था अपितु भौतिकता एवं आध्यात्मिकता का था। वर्तमान में अतिभौतिकता के सर्वनाश की अति आवश्यकता है तभी मानवता की प्रतिष्ठा होगी।

मूल शब्दः मानवतावाद, कर्त्तव्यपरायणता, आध्यात्मिकता, कूटनीतिज्ञता, नीतिमत्ता

भारत की पुनीत एवं पावन धरा पर 'श्रीराम' एक ऐसा विलक्षण व्यक्तित्व है जो स्मरणमात्र से ही हृदय को आध्यात्मिकता से आप्लावित कर देता है। धर्मोद्धारक, मर्यादाशील, सौन्दर्य निधान राम काव्य नायक के रूप में अवतरित होकर युगीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों से उत्पन्न विषमताओं, विकृतियों का अवलोकन करके समन्वय एवं न्याय के मार्ग पर चलते हुए मानवतावाद की प्रतिष्ठा करते हैं। आदि कवि वाल्मीकि की 'रामायण' को उपजीव्य बनाकर हिन्दी साहित्य के अनेक कवियों ने रामकाव्य की सृजना द्वारा स्वयं को कृतार्थ किया है। एक प्रकार से रामकाव्य भारतीय चिंतन का मेरूदण्ड है। रामकाव्य की परम्परा में 'श्रीराम' के स्वरूप को सर्वाधिक उत्कृष्ट, आदर्श एवं प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय लोकनायक तुलसीदास को है। ''माँगत तुलसी कर जोरे बसहु रामसिय मानस मोरे'' का भाव लिए साधक एवं भक्त कवि ने अपने महाकाव्य 'रामचरितमानस द्वारा स्वयं को धन्य किया ही, इस धरा पर भी जीवन मूल्यों की स्थापना करते हुए आदर्श समाज पर बल दिया। 'मानस' के 'राम' तो शक्ति, शील, सौन्दर्य सम्पन्न हैं ही, 'साकेत के राम भी 'मैं संदेश नहीं स्वर्ग का लाया, इस धरा को स्वर्ग बनाने आया' का भाव लिये हुए अवतरित हुए हैं। 'मानस' के 'राम' एवं 'साकेत के 'राम' का व्यक्तित्व वर्तमान जीवन में भी उतना ही प्रासंगिक एवं उपयोगी है जितना भक्तिकाल एवं 'साकेत' महाकाव्य के समय में था।

तत्कालीन युग परिवेश

किसी भी युग का महाकाव्य हो, उसमें उस युग की संचित सम्पत्ति विद्यमान होती है, कहने का अभिप्राय है कि तत्कालीन समाज की राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक प्रवृत्तियों की झलक दिखाई देती है। विवेच्य महाकाव्य 'रामचरितमानस' की बात करें तो वह युग निराशा, हताशा का युग था। शासक वर्ग मदान्ध हुए जनता का शोषण कर रहे थे। चारों तरफ तानाशाही का शासन स्थापित था। यवनों के कारण हिन्दू धर्म पर प्रहार हो रहे थे विशेषतः उनकी मूर्तियों को खण्डित करके धार्मिक उन्माद पैदा किया जा रहा था। हिंसा, व्यभिचार, धर्मपरिवर्तन, स्त्री शोषण आदि का बोलबाला था। हताश जनता अवलम्ब के लिए जिसकी

ओर निहारती, वे या तो कायर एवं विलासी होकर दासता का जीवन व्यतीत करने लगे थे या फिर स्वाभिमान की रक्षा के लिए लड़ते–लड़ते वीर गति को प्राप्त हो गये थे। उस समय एक ऐसी जीवनदायिनी शक्ति की आवश्यकता थी, जो निराश हृदयों में आशा का संचार कर सके, उनमें प्रेरणा भर सके। तुलसी के 'राम' ऐसी दिव्य शक्तियों से सम्पन्न लोकरक्षक थे, जिसमें महाकवि ने युगीन परिवेश को दृष्टिगत करते हुए आदर्श समाज का चित्रण सन्निहित कर दिया। साकेतकार श्री मैथिलीशरण गुप्त की युग परिस्थितियाँ भी कुछ कम विकट नहीं थीं। विदेशी शासन से शासित समाज व्यवस्था छिन्न–भिन्न हो गयी थी। दासता का जीवन तो दासता का ही होता है चाहे मुगलों की हो या अंग्रेजों की। अतः अंग्रेजी दासता की श्रृंखला तोड़ने के लिए उद्यत भारतीय जन–जीवन में विद्रोह का भाव था तथा आक्रोश की तीव्र ज्वाला भड़क रही थी। स्वतंत्रता के लिए व्यग्र एवं व्याकुल समाज में शिक्षा, सभ्यता, कर्त्तव्यपरायणा का अभाव हो गया था। ''साकेत का युग अंग्रेजी शासन की पशुता का युग था, जिसमें मानवीय विकास की समस्त सुविधाएँ अत्याचार एवं दमन तथा क्रूरता में जलकर भस्म हो चुकी थीं।''[1]

'रामचरितमानस' एवं 'साकेत' में 'राम' : वर्तमान में प्रासंगिकता

महाकवि तुलसी के राम में नर और नारायणत्व दोनों की प्रतिष्ठा हुई है। तुलसी का समाज मुगलकालीन समाज एक ऐसा समाज जहाँ सारी सत्ता सम्राट के नियंत्रण में और सम्राट की शक्ति सामंतों एवं अधिकारियों के रूप में विद्यमान थी, स्वयं को ब्रह्मा समझने वाले क्रूर शासक भोगविलासी, अत्याचारी एवं निरंकुश थे। अकबर के समय में भयंकर अकाल पड़ा, महामारी फैली तथा युद्ध की विभिषिका तो थी ही, ऐसे वातावरण में संत्रस्त प्रजा को देखकर पीड़ा होना स्वाभाविक था। तत्कालीन शासक तो 'श्री राम' जैसे हो नहीं सकते थे तो उन्होंने अपने 'मानस' में रामराज्य की कल्पना करते हुए आदर्श राजा 'राम' की प्रतिष्ठा की। तुलसीदास ने एक स्थान पर कहा है कि–

'बयरू न कर काहू सन कोई।
राम प्रताप विषमता खोई।'[2]

अर्थात–रामराज्य में विषमता नहीं है, कोई किसी से बैर भाव नहीं रखता है। उस समय लोकतंत्र नहीं था फिर भी कवि जनतन्त्रात्मक राज्य शासन की भावना की प्रतिष्ठा करता है। 'साकेत' के 'राम' भी प्रजा के हितैषी हैं। प्रजा का उनके प्रति प्रेम है तो 'राम के हृदय में भी प्रजा विद्यमान है तभी तो 'राम' कहते हैं–

''प्रजा नहीं, तुम प्रकृति हमारी बन गये।
दोनों के सुख–दुःख एक में सन् गये।''[3]

गुप्त जी के समय की राजनैतिक परिस्थितियाँ अस्त व्यस्त थी। देश अपनी आजादी के लिए संघर्षरत था। विविध प्रकार के आंदोलनों का बोलबाला था। महाकवि तुलसीदास एवं राष्ट्रकवि मैथिलीशरण ने अपने महाकाव्यों में 'राम' जैसे आदर्श शासक की प्रतिष्ठा करके तत्कालीन निरंकुशता पर तो प्रहार किया ही है साथ ही वर्तमान के लिए भी एक संदेश दिया है कि जनता का हितैषी ही पूजनीय होता है यद्यपि आज लोकतंत्र है, जनता के चुने हुए प्रतिनिधि ही सरकार चलाते हैं किन्तु विडम्बना यह है कि वे इतने स्वेच्छाचारी, स्वार्थी, भ्रष्ट हो जाते हैं कि जनता त्राहि–त्राहि करने लगती है।

तुलसी के 'राम' एक ओर अवतारी परम ब्रह्म हैं तो दूसरी ओर उच्च चरित्र वाले रघुकुल भूषण एवं रघुकुलमणि आदि उपनामों से विभूषित अद्वितीय सौन्दर्य एवं शक्ति से संपन्न हैं। सुख–समृद्धि में पालित पोषित 'श्री राम' विविध गुणों से संपन्न एक आज्ञाकारी पुत्र हैं–

''प्रातः काल उठि के रघुनाथा।
मातु पिता गुरू नावहिं माथा''[4]

माता–पिता एवं गुरू ही नहीं अपितु परिवार के सभी सदस्यों के प्रति 'राम' शिष्ट आचरण करने वाले हैं। मानव जीवन में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि परिवार में रहकर ही मानव विकास करता है। मनुष्य की प्रथम पाठशाला परिवार ही है। भारतीय परिवार भावात्मक संबंधों से संगठित होते हैं, इसी कारण भारतीय पारिवारिक जीवन आदर्शात्मक रहा है। जहाँ माता–पिता संतान के प्रति वात्सल्य भाव रखते हैं, उनकी शिक्षा–दीक्षा पर बल देते हैं तथा उन्हें विविध संस्कारों से विभूषित करते हुए आनन्दित होते हैं, उसी प्रकार संतान भी माता–पिता के प्रति आज्ञाकारी, स्नेहिल, सहयोगी और त्यागभावना से परिपूर्ण होती है। राजा दशरथ एवं रानी कौशल्या से जन्मे 'राम' हर स्थिति में आज्ञाकारी पुत्र हैं। उनके जीवन की इससे बड़ी परीक्षा और क्या हो सकती है जैसी वनवास प्राप्त होने की। एक तरफ पुत्र 'राम' के राज्याभिषेक की तैयारी चल रही है माता–पिता बन्धु बान्धव गुरू और अयोध्यावासी अन्य जन भी प्रसन्नचित्त हैं खुशियाँ मनायी जा रही हैं उसी उत्सव के मध्य भीषण आघात किया गया। माता कैकेयी के दो वरदानों ने सभी अनुकूलताओं को प्रतिकूलताओं में परिवर्तित कर दिया। पुत्र 'राम' भी तो आदर्श पुत्र हैं–सहर्ष राजसी वस्त्रों का परित्याग करके वन गमन के लिए उद्यत हो गये और पिता से कहते हैं–

''तुम्हीं हो तात। परमाराध्य मेरे।
हुए सब धर्म अब सुखसाध्य मेरे।''[5]

राजा दशरथ आज राजा नहीं अपितु एक दीन हीन पिता हैं जिन्होंने पुत्रेष्ठि यज्ञ करने के पश्चात् 'राम' को प्राप्त किया, कैसे उन्हें वन जाने की आज्ञा दें। अतः दशरथ 'राम' से आदेश न मानने के लिए कहते हैं जिससे राम उन्हें छोड़कर न जा सकें उनका मानना है कि पिता ने वचन देने की बात कही थी, अब पुत्र उसे स्वीकार करे या ना करे लेकिन 'राम पिता दशरथ से कहते हैं–

''तुम्हारा पुत्र मैं आज्ञा तुम्हारी–
न मानूँ तो कहे क्या सृष्टि सारी?
प्रकट होगा कपट ही हाय! इससे,
न माँ के साथ होगा न्याय इससे
मिटेगी वंश–मर्यादा हमारी
बनेंगे हम अगौरव–मार्गचारी।''[6]

धर्म की साकार प्रतिमा 'श्री राम' धर्म के समक्ष धन को तुच्छ मानते हैं तथा माता को समझाते हुए कहते हैं–

वृथा क्षोभ का काम नहीं,
धर्म बड़ा, धन–धाम नहीं।'[7]

माता कैकेयी से भी राम कहते हैं कि–

''सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी
तनय मातु पितु तोष निहारा, दुर्लभ जननि सकल संसारा।''[8]

अटूट धैयवाले आज्ञाकारी राम एक आदर्श पुत्र ही नहीं बल्कि सहृदय एवं आदर्श भाई भी हैं। तुलसी के परिवेश में पिता–पुत्र में

राज्य सत्ता के लिए छल, प्रपंच, हत्या, कैद में डालना जैसी विभीषिकाएँ विद्यमान थीं फिर भाई भाई में प्रेम तो दूर की बात है। मुगलों के शासन काल में अपनों का रक्त बहाकर सत्ता प्राप्त करना साधारण सी बात थी, ऐसी युग परिस्थिति के साक्षी लोकनायक ने भ्रातृ प्रेमी 'राम' का चरित्रांकन किया। विमाता द्वारा राजतिलक के बदले राज्य निष्कासन दिया जाना और फिर भी किसी भी प्रकार की ईर्ष्या एवं द्वेषभाव न रखना किसी भी पुत्र के लिए कठिन होता है पर 'राम' ठहरे भ्रातृ प्रेमी। 'मानस' में राम कहते हैं–

''भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू।
विधि सब विधि मोहि सनमुख आजू।
जौं न जाउँ बन ऐसेहु काजा।
प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा।।''[9]

अंग्रेजी शासन में भी देशवासियों के हृदय से बन्धुत्व की भावना लुप्त होती जा रही थी। भाई ही भाई के रक्त का पिपासु बन गये थे। कुछ देशप्रेमी ही ऐसे थे, जिन्होंने स्वार्थ भावना,लोलुपता का विरोध किया तथा एकता, परहित भावना, स्वार्थोंके त्याग पर बल दिया। सुधार की यह प्रवृति 'साकेत' के 'राम' में भी है। राम को वन जाने का आदेश हुआ है और भरत का राजतिलक होना है तो इसमें खेद करने की क्या बात है, भरत मेरे स्नेही भाई है, हम भाइयों में कोई भेदभाव नहीं है–

''अरे यह बात है तो खेद क्या है?
भरत में और मुझ में भेद क्या है?
करें वे प्रिय यहाँ निज–कर्म–पालन,
करूँगा मैं विपिन में धर्म–पालन।''''[10]

मेघनाद द्वारा लक्ष्मण को घायल किये जाने पर राम भ्रातृ प्रेम में साधारण मानव की भाँति विलाप करते हुए अपना धैर्य छोड़कर भावविह्वल होकर कह उठते हैं–

भाई का बदला भाई ही!
गरज उठे वे घन गम्भीर।।''[11]

भ्रातृ प्रेमी 'राम' पारिवारिक मूल्यों की स्थापना पर बल देने वाले हैं। वर्तमान समय में पारिवारिक मूल्यों का विघटन तेजी से हुआ है। आज तो माता–पिता के प्रति ही उपेक्षा भाव है, भाई–बहिनों के प्रति त्याग, प्रेमभाव वो भी 'राम' जैसा कल्पनातीत है।

गुरू–शिष्य परम्परा को जीवंतता प्रदान करने वाला 'राम' का चरित्र वर्तमान परिवेश में अत्यंत प्रेरणादायी है। गुरूओं के प्रति अभद्र टिप्पणी, हिंसात्मक कार्यप्रणाली, धमकाना, अशिष्ट आचरण करना, राजनैतिक प्रपंचों में लिप्त रहकर शिक्षा तंत्र को अपाहिज बनाना तथा विद्या की अर्थी निकालने वाले शिष्यों के लिए 'श्री राम' का पावन एवं पुनीत व्यक्तित्व सर्वदा–सर्वथा अनुकरणीय है। गुरू के प्रति 'राम' की भक्ति का एक प्रसंग–राज्याभिषेक की तैयारी चल रही है, राजा दशरथ गुरू वसिष्ठ से 'राम' को समयोचित उपदेश देने की प्रार्थना करते हैं। गुरू का आगमन सुनकर 'श्री राम' दरवाजे पर आकर उनके चरणों में मस्तक नवाते हैं–

''सादर अरघ देइ घट आने। सोरह भाँति पूति सनमाने।
गहे चरन सिय सहित बहोरी। बोले रामु कमल कर जोरी।।''[12]

निःसंदेह 'राम' शील, सौन्दर्य, शिष्टता, शालीनता से सम्पन्न एक ऐसा विलक्षण व्यक्तित्व है जो स्वगुरूओं के प्रति नतमस्तक है, उनमें लेशमात्र भी अहंकार नहीं है। साकेतकार ने भी 'राम' के गुरू के प्रति सम्मान भाव को निम्न शब्दों द्वारा अभिव्यक्त किया है–

प्रभु–मस्तक से गये जहाँ गुरू–पद छुए
चोटी तक वे हृष्टरोम गदगद हुए
बोल उठे–हम आज सु–गौरव–युक्त हुए
सुत तुम वल्कल पहन, शिष्य से सुत हुए।''[13]

'राम' वन जाते समय भाई लक्ष्मण को भी यही समझाते हैं कि जो लोग माता–पिता, गुरु और स्वामी की शिक्षा को स्वाभाविक ही सिर चढ़ाकर उसका पालन करते हैं, वे ही जन्म लेने का फल प्राप्त करते हैं, नहीं तो जगत में जन्म व्यर्थ है।

तुलसीदास उदारमना एवं सच्चे युग चिन्तक थे, उन्होंने तत्कालीन राजनैतिक विषमता, सामाजिक–पारिवारिक कटुता, धर्म और सम्प्रदाय, जातिगत द्वेषभाव के नाम पर विखंडित होते हुए समाज को देखा उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप समन्वयवादी दृष्टिकोण को अपनाया। कलम के धनी कवि के पास कृत्तित्व ही ऐसा माध्यम थी जिससे वह अपने विचारों–भावों को समाज से अवगत करा सके, तभी तो उनके राम का शील लौकिक और वैदिक धर्म–रक्षा, गुरूजनादि से लेकर जन सामान्य तक के प्रति यथोचित अपनत्व, कुल परम्परा का निर्वाह, दया, करूणा, मैत्री, क्षमा, मर्यादा–पालन आदि अनेक वैयक्तिक, सदाचारमय, चारित्रिक गुणों से भरा–पूरा है। तुलसी के 'राम' जीवन की पारिवारिक एवं सामाजिक समस्या का निदान त्याग और प्रेम के द्वारा करते हैं, उनमें समन्वय की विराट भावना है, ''तुलसी के राम राजा नहीं, दीनबन्धु हैं। यह दीनबन्धुता, किसी भी व्यक्ति के आदर्श को आधुनिकतम सामाजिक आदर्श की भूमि पर खड़ा करती है।''[14]

'रामचरितमानस' में कोल–किरात, भील आदि आदिम संघात्मक जातियों का वर्णन है, निषाद और शबरी जैसे पात्र हैं जो शूद्र कोटि के हैं। तत्कालीन वर्ण व्यवस्था ने जाति व्यवस्था को जन्म दिया जिसके परिणामस्वरूप समाज का विघटन हुआ। समाज अनेक इकाइयों में विभाजित हो गया। शनैः शनैः अस्पृश्यता, छुआछूत ने, जातिगत विभेदता ने विकराल रूप धारण कर लिया। सामाजिक विषमता उत्पन्न होने से समाज की प्रगति धारा भी मंद पड़ गई थी, तभी तो लोकनायक ने विविध जातियों एवं वर्णों के पात्रों की अवतारणा करके 'राम' के प्रति उनका तथा उनके प्रति 'राम' का प्रेम भाव चित्रित किया है। निषादराज गुह को जब राम–लक्ष्मण, सीता के आने का समाचार प्राप्त होता है तो वह प्रियजनों, बन्धुबान्धवों के साथ भेंट स्वरूप फल–मूल लेकर श्री राम से मिलने जाता है तो श्रीराम उसे अपने पास बैठाकर उससे कुशल क्षेम पूछते हैं–

''सहज सनेह बिबस रघुराई।
पूँछी कुसल निकट बैठाई।''[15]

साकेतकार भी छुआछूत निवारण को ही मान्यता देने वाले थे, यही कारण है कि उनके राम निषाद को अंक लगाकर भेंटते हैं–

''फिर गुह ने हँस उन्हें हँसाकर नत किया।
प्रभु ने तत्क्षण उसे अंक में भर लिया।।''[16]

सर्वशक्तिमान 'श्री राम' साधारण मानव की भाँति केवट से प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें गंगा पार करा दे परन्तु केवट 'नौका' के स्त्री होने का बहाना बनाकर उनके चरण धोना चाहता है। राम उसके हृदय की बात जानते हैं इसीलिए सहर्ष चरण धुलवाने के लिए तैयार हो जाते हैं। कोल–भील भी श्रीराम के आगमन का समाचार सुनकर हर्षित होते हैं। उनका मानना है कि वे

भाग्यशाली हैं जो 'राम' स्वयं चलकर उनके समीप आये हैं। वे 'राम' से वार्तालाप करते हैं और राम भी स्नेह भाव से उनके वचनों को सुनते हैं जैसे कोई पिता अपने बालकों के वचनों को सुनता है–

रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जान निहारा।
राम सकल बनचर तब तोषे। कहि मृदु बचन प्रेम परिपोषे।।''[17]

'राम' किसी के भी प्रति जातिगत विद्वेष नहीं रखते, सबके प्रति समभाव हैं। वे शबरी के आश्रम में जाते हैं तो वह उन्हें अत्यंत रसीले और स्वादिष्ट फल खाने के लिए देती है 'राम' सात्विक भाव से उनका भक्षण करते हैं। 'शबरी' 'राम' से कहती है– ''अधम जाति में जड़मति भारी''[18] तब राम कहते हैं–

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई।
भगति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल जलद देखिउ जैसा।।''[19]

समन्वयकारी दृष्टिकोण रखने वाले राम के व्यक्तित्व का पूर्ण प्रकाशन 'रामचरितमानस' में प्राप्त होता है। वे राजधर्म की रक्षा करने वाले, नीतिकुशल, जननी जन्मभूमि के सच्चे सेवक, शरणागतों की रक्षा करने वाले हैं। राम–रावण युद्ध दो संस्कृतियों का संघर्ष था। 'राम' जनतांत्रिक व्यवस्था के समर्थक तथा रावण स्वेच्छाचारी तानाशाह की संस्कृति का समर्थक था। ''तुलसी के राम मानवतावादी हैं। वे दानवी प्रवृत्तियों से मानवता की रक्षा करने हेतु राक्षसों का संहार करते हैं। राम की रावण पर विजय मानवता की ही विजय है।''[20] मानव धर्म की प्रतिष्ठा करने वाले 'राम' शरणागत के दुःख निवारण के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। एक प्रसंग है–मुनि राम से कहते हैं कि असुरों के दलों ने सब मुनियों को खा लिया है–ये जो दिखाई दे रहे हैं,उन्हीं की अस्थियों के ढेर हैं, यह सुनते ही 'राम' के नेत्रों में जल भर आया, उनकी हृदयगत करुणा आँसुओं के रूप में प्रकट हुई तत्पश्चात् ही उन्होंने प्रण किया कि मैं इस धरा को असुरों से रहित कर दूँगा–

'निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह।''[21]

'रामचरितमानस' के 'राम' के समान ही 'साकेत' में भी 'राम' इसी प्रकार की प्रतिज्ञा लेते हैं–

''मुनियों को दक्षिण देश आज दुर्गम है
बर्बर कौणप–गण वहाँ उग्र यम–सम है
वह भौतिक मद से मत्त यथेच्छाचारी
मेटूँगा उसकी कुगति–कुमति मैं सारी।''[22]

निर्दोष, सदाचारी, तपस्वियों, दुःखीजनों की रक्षा करना 'श्री राम' के जीवन का उद्देश्य था। उनकी शरण में शत्रु का संबन्धीजन भी आ जाये, निःस्वार्थ भाव से हृदय से सम्मान देते हैं, उसकी रक्षा करते हैं–जैसे उन्होंने सुग्रीव को मित्र मानकर उसका साथ तथा प्रबल प्रतिद्वन्द्वी रावण के भ्राता विभीषण को मान–सम्मान दिया। 'साकेत' महाकाव्य में राम कहते हैं–

''मैं आया उनके हेतु कि जो तापित हैं,
जो विवश, विकल, बल–हीन, दीन शापित हैं''[23]

सज्जनों के रक्षक एवं आततायियों को दण्ड देने वाले राम भली प्रकार समझते थे कि असुरों से, उद्दण्डियों से कैसे बातचीत की जाये। तभी तो उन्होंने धरा को राक्षस विहीन करने का प्रण लिया था। वर्तमान जीवन में ऐसे असुरों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है जो निर्दोषों का खून बहाते हैं। उनके भीषण रक्तपात, अत्याचारों से धरा पर मानवता छिन्न–भिन्न हो गयी है। 'मानस' में एक प्रसंग आया है 'राम' अपनी सेना के लिए समुद्र से मार्ग देने की विनती करते हैं, पूरे तीन दिन व्यतीत हो जाने पर भी समुद्र हठ नहीं छोड़ता तो राम उसे दण्ड देने के लिए बाण संधान करते हुए कहते हैं–

''विनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति।।[24]

ये पंक्तियाँ सिद्ध करती हैं कि हिंसक, अज्ञानी, जड़ बुद्धि वाले प्रेम की भाषा नहीं समझ सकते। आज भी अनेक ऐसे तथाकथित राजनीतिज्ञ एवं समाज के ठेकेदार यानि सामाजिक कार्यकर्ता हैं जो सेना पर प्रहार करने वाले पत्थरबाजों को 'मासूम' शब्द से सम्बोधित करते हैं जबकि सच्चाई यह है कि ये पत्थरबाज आतंकियों के पाले हुए हैं, राष्ट्र विरोधी हैं अतः उनसे उनकी ही भाषा में बात की जा सकती है। वर्तमान में 'राम' जैसे व्यक्तित्व की आवश्यकता है जो इस धरा पर सुख शांति का साम्राज्य स्थापित करके मानवता का परचम लहरा सके।

मानवता की साकार मूर्ति 'राम' एक कुशल शासक के रूप में चित्रित हुए हैं। युगीन राजनीतिक परिस्थितियों ने लोकनायक तुलसीदास को इतना सजग एवं सचेत बना दिया था कि उन्हें राजनीति की अच्छी समझ हो गई यही कारण रहा कि तुलसी के 'राम' में राजनीतिक क्षेत्र की कूटनीतिज्ञता के भी दर्शन होते हैं। राजनीति में चार नीति कार्य करती हैं–साम, दाम, दण्ड, भेद। एक कुशल शासक के रूप में राम सभी नीतियों का पालन करते हैं। 'साकेत' के राम में सम्माननीय पिता राजा दशरथ की आज्ञा का पालन करते हुए, स्नेही भ्राता भरत एवं माता कैकेयी के प्रति सामनीति के दर्शन होते हैं–

पर जो निज नृप और पिता का भी न हो।
हो सकता है कभी प्रजा का वह कहो।[25]

कर्त्तव्यपालक एवं धर्मपालक 'राम' शरण में आये हुए विभीषण की रक्षा करने के साथ–साथ उसका राजतिलक भी करते हैं, जिसमें वे दाम नीति का पालन करते हैं।

''बैरी का भाई था, फिर भी प्रभु ने बन्धु–समान लिया।
उसको शरणागत विलोक कर हित से समुचित मान दिया। ''[26]

किष्किंधा नरेश सुग्रीव की अपने भाई बालि से शत्रुता थी जिसने छल से उसकी पत्नी एवं राज्य दोनों को अधीनस्थ कर लिया। राम सुग्रीव से मित्रता करके उसके भाई बालि के वध का आश्वासन देते हैं, सुग्रीव भी 'राम' की सहायता के लिए तत्पर है, इस प्रकार 'श्री राम' भेद नीति का पालन करते हैं। दण्डनीति तो अनेक स्थानों पर दृष्टिगोचर होती है, जैसे बालि को दण्ड देना, रावण को तथा अन्य असुरों को दण्ड देना। एक शासक के रूप में 'राम' ने जिस भी नीति को अपनाया हो पर उन्होंने सर्वदा सर्वथा मानव धर्म की रक्षा की है।

'रामचरितमानस' एवं 'साकेत' महाकाव्य अलग–अलग परिवेश का परिणाम हैं। तुलसीदास जी एवं गुप्त जी की युग परिस्थितियाँ भिन्न थीं, परिस्थितियाँ किसी भी युग की कैसी भी रही हों 'श्री राम' तो 'राम' ही हैं उनमें त्याग, शीलता, कर्त्तव्यनिष्ठता एवं समर्पण काभाव है– इन सबका प्रमुख कारण है उनकी 'सकारात्मक सोच। मनोवैज्ञानिक धरातल पर देखें तो राम के

व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता उनकी सोच ही है, जिसमें नकारात्मकता का अभाव है। उनके जीवन से जुड़े हुए अनेक प्रसंग हैं जैसे ऋषि विश्वामित्र यज्ञ से राक्षसों की रक्षा करने के लिए राजा दशरथ से 'राम' को माँगने के लिए आते हैं। सुकुमार राम–लक्ष्मण को भेजने में संकोच करने वाले पिता के समक्ष 'राम' ऋषिवर के साथ जाने के लिए सहर्ष तैयार हो जाते हैं। पिता की मान–मर्यादा का ध्यान रखते हुए प्रसन्नचित होकर प्रस्थान करते हैं। सीता स्वयंवर के समय 'शिव' के विशाल धनुष 'पिनाक' को उठाने और तोड़ने का कार्य करते हैं, उसी समय श्री परशुराम द्वारा 'राम' को शिव द्रोही कहा गया, उन्हें युद्ध के लिए ललकारा गया फिर भी 'राम' नम्र होकर श्री परशुराम से कहते हैं–

''राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा। कर कुठारू आगे यह सीसा।
जेहि रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी। मोहि जानिअ आपन अनुगामी।।''[27]

'राम' की विनम्रता, सहनशीलता का कारण उनकी दुर्बलता नहीं अपितु सकारात्मक सोच है, जो अकारण किसी विवाद को बढ़ाना नहीं चाहते। विमाता द्वारा राज्य से निष्कासित होने पर स्वयं तो द्वेषभाव रखते ही नहीं हैं, क्रोधी स्वभाव वाले भ्राता लक्ष्मण को भी समझाते हैं–

'पिता हैं और माता यहाँ पर
भरत–शत्रुघन–से भ्राता यहाँ पर।[28]

इतिहास साक्षी है कि सत्ता लोलुपों ने राज्य सत्ता के लिए क्या–क्या पाप कर्म नहीं किये, पिता को कैद में डाला, भाइयों को मरवाडाला यहाँ तक कि पुत्रों तक को कैद में रखा जब कि राम ने सकारात्मक सोच के कारण ही सभी सुख संसाधनों का परित्याग करके वनवासी का जीवन व्यतीत किया तत्पश्चात् एक सच्चे प्रजापालक के रूप में प्रजा का हित चिंतन करते हुए जीवन व्यतीत किया। 'राम' का पावन, उज्ज्वल चरित्र वर्तमान जीवन में प्रेरणास्पद है विशेषतः ऐसे नेताओं के लिए जो कुर्सी प्राप्ति के लिए एक दूसरे पर कटाक्ष करते हुए जनता की बलि चढ़ाने में परहेज नहीं करते। देश विरोधी नारे लगाने वाले, आतंकवादियों के हितैषी अगर अपनी सोच में परिवर्तन ले आयें तो भारत और अधिक शक्तिशाली राष्ट्र बन सकेगा।

निष्कर्श

भारतीय संस्कृति समावेशी होने के साथ–साथ पूर्ण समाज की उन्नति की समर्थक रही है। भौतिक संसाधनों के पीछे दौड़ता हुए आज का मानव आध्यात्मिकता से दूर होता जा रहा है, यही दूरी उसके भीतर द्वंद्व, व्याकुलता को जन्म देती है। लम्बे समय तक दासता के बंधन में रहे भारत की आर्थिक उन्नति एवं विकास तो रुका ही, मानसिक हानि भी हुई। आदर्श समाजव परिवार का प्रतिष्ठापक हमारा देश न जाने कब विश्रृंखलित होता चला गया। वर्तमान में हम स्वतंत्रता की साँस ले रहे हैं पर यह कहने भर के लिए है, हमारे सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक, नैतिक मूल्य छिन्न–भिन्न हो गये हैं। एकाकीपन, छटपटाहट, आकुलता, आपसी वैमनस्य, ईर्ष्या–द्वेष, कट्टरता ने जड़ें जमा ली हैं। पारिवारिक संबंधों का विखराव सर्वाधिक पीड़ादायक है। वृद्ध माता–पिता का उपेक्षित जीवन या तो वृद्धाश्रमों में है या फिर सड़कों पर भिक्षा वृत्ति करते मिल जायेंगे। बंद घर में सड़ता हुआ मृत शरीर परिवार जन दूर निवास कर रहे हैं, कैसा विडम्बनापूर्ण जीवन है? मिठास तो प्रत्येक रिश्ते की समाप्त हो गयी है। अतिशय भौतिकतावादी संस्कृति में आवश्यकता है 'राम' की। आज भी जिसके हृदय में 'राम' हैं वहाँ आध्यात्मिकता है, आदर्शवादिता है, संबंध हैं। उन्होंने युगों–युगों से इस धरा को आध्यात्मिकता से आप्लावित किया है। ''राम की शालीनता, शील शिष्टता, सुन्दरता और नीतिमत्ता के साथ–साथ उनके संकल्प की दृढ़ता, व्यवहार कुशलता, अटूट धैर्य, अविचलित साहस, अमोघ शक्ति, अपरिजेय पराक्रम, सौम्य व्यवहार और कार्य कुशलता एवं निपुण समीचीन निर्णय शक्ति उन्हें एक परिपूर्ण मानव के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं।''[29] मर्यादापुरुषोत्तम राम के पावन चरित्र का वर्णन करने वाले महाकाव्य 'रामचरितमानस' एवं 'साकेत हिन्दी साहित्य जगत की अमूल्य निधि हैं।

सन्दर्भ

1. डॉ० द्वारका प्रसाद मीतल, मैथिलीशरण गुप्त का साहित्य, पृ० 55
2. तुलसीदास, रामचरितमानस उत्तरकाण्ड, (दोहा 19 ग), चौ० 4
3. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत पंचम सर्ग, पृ० 74
4. तुलसीदास, रामचरितमानस बालकाण्ड, (दोहा 204), चौ0 4
5. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत तृतीय सर्ग, पृ० 38
6. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत तृतीय सर्ग, पृ० 45
7. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत चतुर्थ सर्ग, पृ० 57
8. तुलसीदास, रामचरितमानस अयोध्याकाण्ड, (दोहा 40), चौ0 4
9. तुलसीदास, रामचरितमानस अयोध्याकाण्ड, (दोहा 41), चौ० 1
10. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत तृतीय सर्ग, पृ० 38
11. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत एकादश सर्ग, पृ० 296
12. तुलसीदास, रामचरितमानस अयोध्याकाण्ड, (दोहा 8), चौ० 2
13. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत पंचम सर्ग, पृ० 71
14. डॉ० भगीरथ मिश्र, महाकवि तुलसीदास युग संदर्भ, भूमिका पृ० घ
15. तुलसीदास, रामचरितमानस अयोध्याकाण्ड, (दोहा 87), चौ० 2
16. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत पंचम सर्ग, पृ० 80
17. तुलसीदास, रामचरितमानस अयोध्याकाण्ड, (दोहा 136), चौ० 1
18. तुलसीदास, रामचरितमानस अरण्यकाण्ड, (दोहा 34), चौ० 1
19. तुलसीदास, रामचरितमानस अरण्यकाण्ड, (दोहा 34), चौ० 3
20. डॉ० मनोहर सराफ, खड़ी बोली रामकाव्यों में चित्रित समाज और संस्कृति, पृ० 41
21. तुलसीदास, रामचरितमानस अरण्यकाण्ड, दोहा 9
22. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत अष्टम सर्ग, पृ० 146–147
23. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत अष्टम सर्ग, पृ० 145
24. तुलसीदास, रामचरितमानस सुन्दरकाण्ड, दोहा 57
25. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत पंचम सर्ग, पृ० 75
26. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत एकादश सर्ग, पृ० 290
27. तुलसीदास, रामचरितमानस बालकाण्ड, (दोहा 280), चौ0 4
28. मैथिलीशरण गुप्त, साकेत तृतीय सर्ग, पृ० 43

डॉ० भगीरथ मिश्र, महाकवि तुलसीदास युग संदर्भ, पृ० 131